P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-4* ISSUE-2* May (Part-1)- 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

जनजातीय समाज के विकास के नकारात्मक आयाम एवं बदलता भविष्य

महेश चन्द मीना
सह–आचार्य,
भूगोल विभाग,
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय,
अलवर, राजस्थान, भारत

सारांश

भारतीय संविधान में जिन्हें अनुसूचित जनजाती कहा गया वही वर्तमान में आदिवासी या वनवासी जाति प्रकृति की गोद में रहने वाला तबका है। ये उसी जीवन दर्शन में विश्वास करते हैं, जहाँ प्रकृति के दोहन की मनाही थी, विकास की इस संस्कृति में आदिवासी समाज के अधिकारों का उतना ही हनन हुआ है। अधिकांश जनजातियाँ हमारे विकास की वर्तमान प्रक्रिया से लाभान्वित होने की अपेक्षा प्रताड़ित ही हुई है। विकास की वर्तमान अमानवीय एवं संवेदनहीन बाजारवादी व्यवस्था ने जनजातीय समूहों के जीवन को गहराई तक प्रभावित किया है। तथा इनके परम्परागत, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक ढाँचे को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है, क्योंकि विकास के नाम पर किये गये बाँधों का निर्माण, कारखानों के निर्माण, वनों में खनन कार्यों की वजह से न केवल पर्यावरण का ह्रास हुआ अपितु बड़ी संख्या में लोगों के घरों का विस्थापन हुआ। नगरीकरण बढ़ने से परम्परागत हुनर नष्ट होने लगे और बेरोजगारी बढ़ने लगी। असन्तुलित विकास से संसाधन विहीन वर्गों का विकास अवरूद्ध हो गयां लोगों ने राष्ट्रीय विकास के नाम पर जनजातीय समुदाय के लोगों को जल, जंगल, जमीन से अलग कर संस्कृति को प्रभावित किया है।

मुख्य शब्द : जनजतीय विधेयक, अनुसूचीबद्ध, बाजारवादी, विस्थापन, सहस्राब्दि, वैश्वीकरण, समावेशी, भूमण्डलीकरण, ई–चौपाल, ग्राम मॉडल ।

प्रस्तावना

प्रकृति के साहचर्य में मानव सभ्यता पुष्पित एवं पल्लवित हुई है। जब प्रकृति की गोद में इन्सान जीवन–बसर करता था, चैन से रहता था। प्रकृति माँ सरीखी थी, मनुष्य की आवश्यकताएँ पूरी करती थी, साहचर्य का सुख देती थी, प्रकृति सीख देती थी कि इन्सान को अपनी आवश्यकताएँ सीमित रखनी चाहिए, कुदरत से उतना ही लेना चाहिए, जितने से उसका जीवन–यापन चल सके। इसी जीवन दृष्टि का नतीजा था कि सन्तोष को परम सुख का दर्जा दिया। कालान्तर में जीवन–दर्शन बदला, संस्कृति पर असर पड़ा, सभ्यता के मानदण्ड़ बदले, प्रतिमान भी बदल गये। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने याद दिलाया कि ''प्रकृति के पास सबकी जरूरते पूरी करने लायक संसाधन है, पर किसी एक व्यक्ति के भी लोभ को पूरा करने लायक नहीं है।''

आज हम जिसे आदिवासी या वनवासी जाति के नाम से जानते है, वह प्रकृति की गोद में रहने वाला तबका है। आदिवासी समाज उसी जीवन दर्शन में विश्वास करता है, जहाँ प्रकृति के दोहन की मनाही थी क्योंकि ये समाज प्रकृति की गोद में रहना पसन्द करते थे। आदिवासी समाज जिन क्षेत्रों में रहता है वहाँ प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधन पर्याप्त है। वर्तमान में विकास के नजरिये से पूँजीपति इन इलाकों की ओर रूख करते नजर आ रहे है। विकास के मौजूदा मॉडल के साथ आदिवासी समाज कदम ताल मिलाने में असफल साबित हो रहा है, क्योंकि विकास की इस संस्कृति में जो तबका जितना नीचे रहता है, उसके अधिकारों का उतना ही हनन होता है। आधुनिक जीवन की सामान्य सुख–सुविधाओं से वंचित अभाव तथा अपर्याप्तता की जिन्दगी जीने वाले अपनी जीवन शैली और सशक्त जीवन मूल्यों के दम पर इन्सानियत के बेहतरीन नमूने ठहराये जा सकते है। भारत की जनजातियाँ ही यहाँ आदिवासी तथा मूलतः निवास करने वाली जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती हैं, इनके जीवन–यापन का ढंग वर्तमान में भी प्राचीन पद्धतियों से ही संचालित होता आ रहा है। जनजातियों के प्रमुख कार्य कृषि–पशुपालन आदि है साथ ही शिकार करने, मछली पकड़ने, लकड़ी काटने आदि के द्वारा भी ये जीवन–निर्वाह करते है। भारत में जनजातीय समुदाय के लोगों की काफी बड़ी संख्या है और देश में 50 से भी अधिक जनजातीय समुदाय है।

आदिवासी समाज का भौगोलिक एवं सामाजिक रूप से अलग–थलग रहने का इतिहास रहा है और अपने क्षेत्र में उनका राजनीतिक प्रतिनिधित्व नगण्य है, विकास के इस दौर में काफी पीछे हैं। हाल ही में भारत सरकार ने बहु प्रतीक्षित जनजातीय विधेयक'' पारित कर आदिवासी समुदाय को वन भूमि पर उनके अधिकारों को वैधता प्रदान की है, ताकि वे अपनी जीविका आसानी से चला सके। जनजातीय समाज प्रकृति के संरक्षक रहे है तथा प्रकृति व संस्कृति के मध्य सेतु का कार्य करते है। अनेक विद्वानों द्वारा इस समुदाय को आदिवासी, पहाड़ी जनजातियों, जंगली आदिवासी, प्राचीन जनजाती, जंगल निवासी, पिछड़ा हिन्दू, विलीन मानवता इत्यादि नाम दिये है। भारतीय संविधान में इन्हें अनुसूचित जनजाती कहा गया है जबकि वर्तमान में इनको आदिवासी, वन्यजाति, अरण्यवासी आदि नामों से जाना जाता है। जनजातीय समाज की वास्तविक स्थिति ये है कि राष्ट्रीय विकास के नाम पर समुदाय के लोगों को जल, जंगल, जमीन से अलग कर विस्थापन को मजबूर कर दिया है जिससे संस्कृति प्रभावित हुई है।

9 अगस्त को अन्तर्राष्ट्रीय जनजातीय दिवस भी मनाया जाता है। अनुसूचित जनजाति के लोगों को मुख्य रूप से आदिवासी कहा जाता है जो देश के विभिन्न भागों में बसे हुए है, इसमें उत्तरी, उत्तर–पूर्व व भारत के दक्षिणी क्षेत्र शामिल हे। 50 से अधिक आदिवासी समुदायों को मिलाकर अनुसूचित जनजाति का गठन किया गया है जो धार्मिक और सांस्कृतिक रूप से अलग है, साथ ही अलग–2 बोलियाँ भी बोलते हैं। भारत की स्वतंत्रता के तीन वर्ष बाद 1950 में अनुसूचित जनजाति वर्ग की स्थापना हुई थी, ताकि देश के विभिन्न आदिवासी समूहों को एक वर्ग के अन्तर्गत लाकर उनकी समस्याओं का समाधान किया जा सके और भारतीय समाज की मुख्यधारा से जोड़ा जा सकें।

अधिकांश जनजातियाँ हमारे विकास की वर्तमान प्रक्रिया से लाभान्वित होने की अपेक्षा प्रताड़ित ही हुई है। विकास की वर्तमान अमानवीय एवं संवेदनहीन बाजारवादी व्यवस्था ने जनजातीय समूहों के जीवन को गहराई तक प्रभावित किया है तथा इनके परम्परागत, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक ढाँचे को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है। अनुसूचित जनजातियों के वर्तमान एवं भविष्य को प्रभावित करने वाले विकास के नकारात्मक आयामों का जायजा लेने से पहले जरूरी है कि इनकी जनसंख्या और सामाजिक तन्त्र को समझा जाये।

भारत की जनगणना 2011 के अनुसार जनजातियों की वर्तमान जनसंख्या 10.43 करोड़ है तथा देश की कुल आबादी में जनजाति की आबादी का हिस्सा 8.6 फीसदी है, जो भारत के 30 राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में निवास करती है।[1] आबादी के मामले अफ्रीका के बाद जनजातीय समाज के सम्बन्ध में भारत दूसरा सबसे बड़ा देश है। भारतीय सन्दर्भ में मौजूदा विकास के दौर में जनजातीय समाज का जीवन चक्र बड़े संक्रमण से गुजर रहा है। जनसंख्या और सामाजिक संरचना के साथ शिक्षा, गरीबी और सेहत के सूचकांकों से साफ है कि अनुसूचित जनजाति के लिए बेहतर भविष्य को सुनिश्चित करना बहुत ही बड़ी चुनौती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत के संविधान में अनुच्छेद 243 के तहत प्रावधान करके आदिवासियों को अनुसूचीबद्ध किया गया तथा उनके कल्पना एवं विकास के लिए विशेष प्रावधान किए गए है। देश के विभिन्न प्रान्तों में फैले हुए होने के बावजूद ज्यादातर अनुसूचित जनजाति के लोग पहाड़ो पठारों एवं जंगलों में बसे हुए हैं, जिसके फलस्वरूप देश के विकास कार्यक्रमों से प्रायः वे अछूते रहे हैं। जनजातीय इलाकों में आधारभूत संरचनाओं जैसे शिक्षा, सड़क, स्वास्थ्य, आवागमन की सुविधा, पीने के पानी, बिजली तथा सिंचाई की सुविधा इत्यादि की कमी रही है। फलस्वरूप आदिवासियों एवं गैर में रहन–सहन, अर्थोपाय, आजीविका एवं सम्मान के क्षेत्र में असमानता की खाई बढ़ती जा रही है।[2]

विश्व की उभरती अर्थव्यवस्थाओं में से एक तथा विश्व महाशक्ति बनने की ओर अग्रसर हमारा देश आज एक गम्भीर आर्थिक असमानता की ओर बढ़ रहा है। हमारा वर्तमान मॉडल पाश्चात्य सिद्धान्तों पर आधारित है जिसे स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने भारतीय लोकतंत्र के लिए कल्पित किया था। इस मॉडल में पिरामिड संरचना शीर्ष से आधार की तरफ आती हैं

असमानता की इस नाजुक स्थिति के लिए हमारा वर्तमान विकास मॉडल ही जिम्मेदार दिख रहा है। इसलिए विकास की संकल्पना, विकास प्रक्रिया तथा इसके नकारातमक आयाम एवं विकास के विकल्पों की विवेचना अत्यावश्यक हो जाती है। विकास एक निरन्तर परिवर्तनशील एवं गतिशील प्रक्रिया है। इस बहुआयामी संकल्पना की अनेक सूक्ष्म विवेचनाओं के बाद भी कोई निश्चित एवं सर्वमान्य परिभाषा स्वीकार नहीं की गई है। विकास को आर्थिक विकास, सामाजिक विकास, राजनीतिक विकास, सांस्कृतिक विकास, मानव विकास एवं तकनीकि विकास आदि अनेक रूपों में समझा गया है।

आर्थिक क्षेत्र में विकास से तात्पर्य आर्थिक संवृद्धि, उत्पादन व जीवन स्तर में वृद्धि,, अर्थव्यवस्था की उच्च विकास दर से होता है, तो सामाजिक क्षेत्र में इसका तात्पर्य समाज में शिक्षा, साक्षरता अधिकार बोध, जीवन की सुविधाओं और गुणवत्ता में वृद्धि से होता है जिसमें पोषण, स्वास्थ्य, सफाई व चिकित्सा जैसी सुविधाओं की उपलब्धता एवं उच्च जीवन प्रत्याशा व निम्न मृत्यु दर जैसे संकेतक शामिल है।

राजनीति दृष्टि से बढ़ती जनसहभागिता, विकेन्द्रीकरण, मानव–अधिकार संरक्षण एवं नीति निर्माण में स्थानी समुदायों की भागीदारी विकास के अन्तर्गत आते हैं। तकनीकी दृष्टि से समाज में नई तकनीकों का बढ़ना जैसे सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का अत्यधिक प्रचलन ही विकास माना जाता है। इन सभी का सम्मिलित परिणाम ही समाज एवं राष्ट्र का समग्र विकास होता है।[3]

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश ने विकास को 'उच्चतर, पूर्णतर और प्रौढ़ स्थिति की ओर बढ़ना बताया है। एडवर्ड वीडनर के शब्दों में ''विकास गतिशील है, जो सदैव चलता रहता है। विकास मन की स्थिति, प्रवृत्ति और एक दिशा है, जो एक निश्चित लक्ष्य के बजाय एक विशिष्ट

दिशा में परिवर्तन की गति है।[4] एफ. डब्ल्यू रिग्ज ने विकास को विवर्तन के उभरते स्तर द्वारा सम्भाव्य सामाजिक प्रणालियों की वृद्धिमान स्वायत्तता की प्रक्रिया के रूप में माना है।[5] संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की परिभाषा के अनुसार ''दीर्घ तथा स्वस्थ्य जीवन, ज्ञानवान होना एवं संतोषजनक जीवन के लिए उपलब्ध पर्याप्त साधन तथा सामाजिक जीवन में भागीदारी की योग्यता ही विकास है।'' सार रूप में सक्रिय प्रयत्नों, परिश्रम एवं बाह्य सम्पर्क से अत्यन्त वे अच्छे परिवर्तन जो मानव का भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं वैचारिक उन्नति करके जीवन स्तर को उच्च करने में सहायक होते है, विकास कहे जाते हैं।

1990 के दशक के बाद विश्व में आर्थिक विकास सूचकांकों से अधिक महत्त्व मानवीय विकास सूचकांकों को दिया जाने लगा तथा प्रतिवर्ष मानव रिपोर्ट विभिन्न देशों में मानवीय विकास की स्थिति का लेखा–जोखा प्रस्तुत किया जाता है जो विकास की बदलती अवधारणा को व्यक्त करता है। विकास की इस नई अवधारणा में मानव अधिकारों एवं मानव विकास को स्वीकृत करने का प्रयास किया जा रहा है। विकास के अधिकार में कई अन्य अधिकारों जैसे भोजन का अधिकार, स्वच्छ पेयजल का अधिकार, स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार, आजीविका का, अच्छे अभिशासन, भ्रष्टाचार मुक्त प्रशासन का अधिकार, महिलाओं, बच्चों, अल्पसंख्यकों व जनजातीयों के अधिकार तथा सूचना का अधिकार इत्यादि को सम्मिलित किया जा रहा है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा ''विकास के अधिकार पर सार्वजनिक अभिघोषणा 1986 में ''विकास' को एक मानवाधिकार घोषित किया गया है। इस सार्वभौमिक अभिघोषणा के अनुच्छेद 2(3) में विकास के अधिकार को परिभाषित करते हुए रेखांकित किया है कि ''लोगों की विकास में सक्रिय, मुक्त व अर्थपूर्ण भागीदारी होनी चाहिए तथा विकास के लाभों का उपयुक्त आवंटन होना चाहिए।[6] फलतः वर्तमान समय के विकास की गति अति व्यापक हो रही अवधारणा में लोगों के लिए विकास के स्थान पर लोगों के साथ विकास पर बल दिया जा रहा है। प्रौद्योगिकीय उन्नयन को विकास का वाहक बनाने के लिए विश्व बैंक ने एक नया कार्यक्रम ''गरीबों की आवाज (2002) शुरू किया है। इस प्रकार परम्परागत आरोपित विकास के स्थान पर स्व–विकास, सहभागितापूर्ण विकास, सतत् विकास एवं सामाजिक सक्षमता निर्माण को अधिक महत्व दिया जा रहा है क्योंकि परम्परागत आरोपित विकास का मॉडल न तो लोकहितकारी है और न ही सामाजिक न्याय पर आधारित है।

विकास प्रक्रिया के नकारात्मक आयाम

कुछ विद्वानों ने समकालीन विकास को विकास के स्थान पर विनाश की संज्ञा दी है। इस अवधारणा को विकास विरोधी चर्चा, अविकास, कुविकास, स्वकेन्द्रित विकास एवं विपरीत संवृद्धि आदि नाम दिए गए है। आज हमारे विकास में उपनिवेशवाद का नया संस्करण जन्म ले रहा है।[7]विकास का परिणाम निम्न संकेतकों के माध्यम से आंका जा सकता है – जीवन स्तर में परिवर्तन, निर्धनता में कमी, निरक्षरता व अज्ञानता में कमी, आर्थिक स्थिति में उन्नति, सामाजिक न्याय में बढ़ोतरी, समान अवसरों की उपलब्धता, पिछड़ों व अविकसित समूहों का उत्थान, जीवन सुरक्षा उपायों में वृद्धि, समाज कल्याण सुविधाओं की प्रगति, सामाजिक, क्षेत्रीय व वर्ग असमानताओं की समाप्ति, स्वास्थ्य स्तर में विकास, पर्यावरण व पारिस्थितिकी तन्त्र का यथासंभव संरक्षण, समस्त महत्त्वपूर्ण कार्यक्रमों में सहभागिता व स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति इत्यादि। इन संकेतकों की कसौटी पर वर्तमान मॉडल खरा नहीं उतरता है। विकास के नाम पर वास्तव में विषमता, शोषण, अन्याय, बेरोजगारी, भुखमरी, कुविकास, कुपोषण, अशिक्षा और बदहाली ही देखने को मिलती है। वर्तमान मॉडल के नकारात्मक प्रभावों ने जनजातीय समूहों के परम्परागत जीवन एवं इनके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक ढाँचे को गहराई तक प्रभावित किया है। समकालीन विकास प्रक्रिया के विभिन्न नकारात्मक आयाम जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, पर्यावरणीय, तकनीकी व मानवीय इत्यादि अनेक प्रश्नों को जन्म दे रहे है। विकास के नाम पर किये गये बाँधों का निर्माण, बड़े बडे विशालकाय कारखानों के निर्माण से औद्योगिक गतिविधियाँ बढ़ी और वनों में खनन कार्यों की वजह से न केवल पर्यावरण का ह्रास हुआ अपितु बड़ी संख्या में लोगों का घरो और क्षेत्रों से विस्थापन हुआ, जिसका प्रभाव आजीविका खोने और निर्धनता में वृद्धि के रूप में सामने आया। नगरीकरण बढ़ने लगा, परम्परागत हुनर एवं कौशल नष्ट होने लगे, बेरोजगारी बढ़ने लगी। असन्तुलित विकास से संसाधन विहिन वर्गों का विकास अवरूद्ध हुआ तथा भुखमरी, बीमारियाँ व अकाल स्थाई लक्षण बन गए।

संयुक्त राष्ट्र द्वारा जारी किए गए ''सहस्राब्दि विकास लक्ष्य रिपोर्ट 2014'' के अनुसार दुनिया के एक तिहाई गरीब भारत में रहते हैं तथा प्रतिदिन 1.25 अमेरीकी डॉलर से कम में जीवन–यापन कर रहे है।[8] राजनीतिक दृष्टिकोण से विकास में वैश्वीकरण के स्थान पर अमेरिकीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा दिया है। संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा संघ जैसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का उपयोग अमेरिकी विकास एजेंडा लागू करने में किया जा रहा है। तृतीय विश्व के गरीब देशों में नीति–निर्माण में बहुराष्ट्रीय निगमों तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की भूमिका तेजी से बढ़ रही है। इन सबके परिणामस्वरूप आज नव पूँजीवाद छद्म नाम उदारवाद के प्रचार का दौर चल रहा है। इसके मौलिक चरित्र पर अर्थशास्त्र का नोबेल पुरस्कार जीतने वाले अमरीकी अर्थशास्त्री रॉबर्ट विलियम फॉसजे ने एक अध्ययन में पाया कि दास प्रथा के कारण ही अमरीका को बाजारवादी व्यवस्था का नेतृत्वकर्ता बनने का अवसर मिला और इस प्रक्रिया में पूरी की पूरी नीग्रो जाति ही गायब हो गई। उसी तरह जिस देश में जनजातीय समूह निवास करते है उसके विकास में किसी भी तरह से उनकी भागीदारी ही नहीं होगी। भारत में जो विकास हुआ है वो जनजातीय समूहों को मूलधारा में ला सकने में विफल रहा है। प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुए विकास तथा तकनीकी नवाचारों ने जहाँ एक ओर सुविधा दी तो दूसरी ओर ई–वेस्ट की समस्या बढ़ती जा रही हे। जैव अपघटनीय कचरे की समस्या से विश्व के सभी देश प्रभावित हो रहे

हैं। विकसित देशों द्वारा अपने इलैक्ट्रोनिक कचरे को गरीब देशों में डम्पिंग करने की ज्वलन्त समस्या उभर रही है। सांस्कृतिक दृष्टि से वर्तमान विश्व व्यवस्था में स्थानीय भाषाओं, आचार,विचारों, प्रथाओं, संस्कारो का विलोपन हो रहा है। वर्तमान उपभोगतावादी युग में सशक्त पाश्चात्य अर्थव्यवस्थाओं के प्रभाव से सम्पूर्ण विश्व में अंग्रेजी खान–पान, वेश–भूषा एवं आचार–विचारों का प्रसार तेजी से हो रहा है। जिससे सांस्कृतिक विविधता का लगातार विघटन हो रहा है।

मानव सभ्यता के इतिहास में समकालिक सर्वोच्चता को प्राप्त विकास की वर्तमान स्थिति ने स्वयं मानव को ही सर्वाधिक नुकसान पहुँचाया है। विभेदनकारी एवं विनाशकारी विकास प्रक्रिया के कारण जीवन का अधिकार भी मनुष्य के हाथ से निकलता जा रहा है। उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की वर्तमान विकास अवधारणा के कारण हुए प्रौद्योगिकी उन्नयन के फलस्वरूप आई सस्ते बहुराष्ट्रीय उत्पादों की बाढ़ में लघु, कुटीर एवं स्थानीय उद्योग बढ़ गए है और स्थानीय लोगों के रोजगार व आजीविका के साधन खत्म हो गए जिससे भुखमरी की समस्या ने विकराल रूप धारण कर लिया। कृषि क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय निगमों के प्रवेश से परम्परागत सम्बन्धों के स्थान पर नई प्रक्रियाएँ उभरी। किसानों की बहुराष्ट्रीय निगमों पर निर्भरता, प्रौद्योगिकी के अनावश्यक व अत्यधिक उपयोग और कीटनाशकों के अन्धाधुँध व विवेकहीन प्रयोग के कारण बढ़ती उत्पादन लागत व घटते उत्पादन ने किसानों की माली हालत खराब कर दी है। बढ़ती ऋणग्रस्तता से मजबूर किसान आत्महत्या करके अपनी जीवन लीला समाप्त कर रहे है। अधिकतर जनजातीय समूहों की आजीविका कृषि पर निर्भर होने के कारण उनके रोजगार व आजीविका के साधन प्रायः समाप्त हो रहे हैं। विकास की वर्तमान प्रक्रिया ने पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचाया है, जनजातीय समूहों की प्रकृति से नजदीकीरही है। प्रदूषण की समस्या बढ़ती ही जा रही है जिससे हवा एवं पानीबिना विश्व की गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गई है। औद्योगिकरण व नगरीकरण से वनों का तेजी से विनाश हुआ है। मरूस्थल, घटता भू–जल स्तर तथा छिद्रित ओजोन की परत आदि भयावह प्राकृतिक आपदाएँ बढ़ रही है, जीव प्रजातियों, वनस्पति विलुप्त हो रही है। ग्लेशियर पिघल रहे है। इसके प्रभाव से समुद्रों का जल स्तर बढ़ेगा, तटवर्ती क्षेत्र जलमग्न हो जाएँगे, मौसम चक्र बदलने से बाढ़ एवं सूखे की स्थितियाँ दृष्टिगोचर होंगी तथा उत्पादन में भारी कमी के कारण विश्व में खाद्यान्न की समस्या उत्पन्न हो रही है। विकास के इन नकारात्मक प्रभावों ने जनजातीय समूहों के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न लगा दिया है।[9]

प्रत्येक युग में विकास का कोई निश्चित प्रतिमान लोकप्रिय रहा है। स्वदेशी दृष्टिकोण तथा नैतिकता की भावनायुक्त इस प्रतिमान को ''ग्राम मॉडल'' या तृष्णमूल स्तर से भूमण्डलीकरण की संज्ञा दी गई है। यह प्रतिमान समष्टि वैश्विक संरचनाओं जैसे बहुराष्ट्रीय निगमों और व्यष्टि स्थानीय इकाइयों जैसे स्वयं सहायता समूह, सहकारी समितियाँ व स्थानीय उत्पादकों के मध्य सम्बन्धों की स्थापना द्वारा दोनों को एक–दूसरे के विकास का साधन बनाने का प्रयत्न करता है। इस प्रतिमान का उद्देश्य प्रबन्धन के अन्तर्राष्ट्रीय कौशल को स्थानीय स्तर व स्थानीय ज्ञान व उत्पादों को अन्तर्राष्ट्रीय बाजार तक पहुँचाने पर बल देना है।

जनजातीयों के बेहतर भविष्य के लिए मुख्य धारा में जो लोग उन्हें आदिवासियों के प्रति संवेदनशील होने, उनकी संस्कृति एवं संस्कारों को जानने व पहचानने के भाव से सम्मान देकर उन्हें मुख्यधारा से जोड़ने की और अधिक आवश्यकता है तथा एक दूसरे से स्वतंत्र, ऐसी स्थानीय या राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं को विकसित पंचवर्षीय योजना की धुरी ''तीव्र अधिक समावेशी एवं सतत विकास की ओर बढ़ने व केन्द्रित विकास मॉडल को लाने की आवश्यकता है।[10]

अध्ययन का उद्देश्य

प्रकृति की गोद में रहने वाला तबका जो आदिवासी या जनजाती के नाम से जाना जाता है। वह समूह जो प्रकृति की गोद में रहना पसन्द करता है, जिस जीवन दर्शन में विश्वास करता है, वह समाज विकास के मौजूदा मॉडल के साथ कदम–ताल मिलाने में असफल साबित हो रहा है। आज भी समाज के अधिकांश लोग सामान्य सुख–सुविधाओं से वंचित व अपर्याप्तता का जीवन जीने को मजबूर है। वर्तमान मॉडल के नकारात्मक प्रभावों ने समाज के परम्परागत जीवन व सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक ढाँचे को गहराई तक प्रभावित किया है। असन्तुलित विकास से नगरीकरण बढ़ने लगा और परम्परागत हुनर व कौशल नष्ट होने से बेरोजगारी बढ़ने लगी।

निष्कर्ष

समावेशी विकास प्रक्रिया को अपनाना होगा क्योंकि इस विकास का लाभ समाज के कमजोर वर्गों सहित सभी वर्गों तक समान रूप से पहुँचता हैं, भौगोलिक व आर्थिक, असमानताएँ घटती है तथा स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वच्छ पेयजल स्वच्छ पर्यावरण, पौष्टिक भोजन जैसी बुनियादी सुविधाओं तक सभी की पहुँच समान रूप से होती है।'' आवश्यकता है विकास प्रक्रिया में आर्थिक संवृद्धि को जोड़कर समानता युक्त सतत् एवं समावेशी विकास की ओर बढ़ने की, ताकि जनजातीय समूहों के लिए बेहतर आज का निर्माण हो सके और सुनहरे भविष्य की आशा की जा सके। प्रधानमंत्री मोदी जी ने कहा है कि ''समग्र प्रगति हम सभी की सामूहिक जिम्मेदारी है, मुझे विश्वास है कि हम इस जिम्मेदारी को पूरी तरह निभाएंगे। विकास प्रक्रिया को गाँव–स्तर पर पहुँचाने तथा स्थानीय गाँव को ग्लोबल विलेज (विश्व गाँव) से जोड़ने के उद्देश्य के कारण इसे ''ग्राम मॉडल'' अर्थात् (ग्रास कर एक्शन मैनेजमेन्ट) की संज्ञा दी गई है। भारत में आई.टी.सी. द्वारा प्रारम्भ किया गया ई–चौपाल कार्यक्रम ग्राम मॉडल पर आधारित है जिसे आशातीत सफलता प्राप्त हुई अधिकांश जनजातियाँ हमारे विकास की वर्तमान प्रक्रिया से लाभान्वित होने की अपेक्षा प्रताड़ित हुई है। स्वदेशी दृष्टिकोण तथा नैतिकता की भावना युक्त इस प्रतिमान को ग्राम मॉडल या तृणमूल स्तर है। भूमण्डलीकरण की संज्ञा दी गई है। इस प्रतिमान का

उद्देश्य प्रबन्धन के अन्तर्राष्ट्रीय कौशल को स्थानीय स्तर तक एवं स्थानीय ज्ञान व उत्पादों को अन्तर्राष्ट्रीय बाजार तक पहुँचाने पर बल देना है।

अंत टिप्पणी

1. *मानव अधिकार : नई दिशाएँ, डॉ. रणसिंह,अंक – 11, 2014, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग भारत पृ. सं. 105*
2. *नूतन मौर्या योजना हिन्दी मासिक नई दिल्ली, जनवरी 2013*
3. *नन्दलाल भारती, लोक प्रशासन, अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका, नई दिल्ली, जुलाई–दिसम्बर 2011*
4. *एडवर्ड वीडनर, डवलपमेंट एडमिनिस्ट्रेशन : ए न्यू फोकस ऑफ रिसर्च, फेरल हेडी, एवं सिवितल स्टोक्स पेपर्स ऑन कम्पेरेटिव एडमिनिस्ट्रेशन, 1962, पृ. 99*
5. *फ्रेड डब्ल्यू किग्स, डवलपमेंट एडमिनिस्ट्रेशन, इन एशिया, 1970 पृ. 72*
6. *यू.एन.टूडे, संयुक्त राष्ट्र संघ प्रकाशन 4 दिसम्बर, 1986*
7. *नूरिना हर्ट्ज, द साइलें टेक ओवर, फ्री प्रेस नई दिल्ली।*
8. *सहस्राबिद विकास लक्ष्य रिपोर्ट, 2014, संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट, 2014*
9. *मानवाधिकार : नई दिशाएँ, डॉ. रणसिंह वार्षिक अंक 11, 2014, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग भारत, पृ. सं. 114*
10. *बारहवीं पंचवर्षीय योजना का दृष्टिकोण पत्र, योजना आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली।*
11. *आर्थिक सर्वेक्षण 2013–14 वित्त मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली*
12. *मानवाधिकार : नई दिशाएँ, डॉ. रणसिंह वार्षिक अंक – 11, 2014, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग भारत, पृ. 115*